शैलेश मटियानी के उपन्यास और मनोविश्लेषण (एक अध्ययन)

डॉ. मृणालिनी पारीक,
सहायक आचार्य, हिन्दी
एन.डी.बी. राजकीय पीजी महाविद्यालय, नोहर (राज.)

कथाकार श्री शैलेश मटियानी स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य जगत में एक दिग्गज लेखक के रूप में जाने जाते हैं। पहाड़ी प्रदेश उत्तरांचल के अल्मोड़ा जनपद के बाड़ेछिना गाँव के निम्न मध्यम वर्गीय बूचड़ व जुआरियों के परिवार में जन्म लेकर हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में एक महान कथाकार के रूप में प्रतिष्ठित होने तक की यात्रा में इनका जीवन संधर्षों से भरा रहा। मटियानी का साहित्यिक व्यक्तित्व गंभीर अनुभूतियों और तीव्र संवेदनाओं द्वारा निर्मित हुआ है। मटियानी ने अपनी रचनाओं में भोगे हुए, स्वयं अनुभव किये गये यथार्थ को अभिव्यक्ति दी है। उनके द्वारा भोगे गये यथार्थ का, जीवनानुभवों का उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर और उनकी सम्पूर्ण रचना प्रक्रिया पर अविभाज्य प्रभाव पड़ा है।

गद्य की लगभग सभी महत्वपूर्ण विधाओं पर लेखनी चलाने वाले 'विकल्प' और 'जनपक्ष' जैसी पत्रिकाओं का सफल संपादन करने वाले हिन्दी साहित्य जगत के सशक्त हस्ताक्षर शैलेश मटियानी को जितनी सफलता उपन्यास रचना के क्षेत्र में मिली है, उतनी गद्य की अन्य विधाओं के क्षेत्र में नहीं। वस्तुतः अपने उपन्यासों में लेखक ने नैतिक दृष्टि से गंधाते निम्न मध्यम वर्गीय जीवन के कटु यथार्थ का अंकन किया है। इस यथार्थ का चित्रण करते हुए एक ओर तो लेखक ने प्रामाणिक अनुभवों को आधार बनाया है तो दूसरी ओर उनकी दृष्टि मनोविश्लेषणवाद से प्रभावित रही है।

शैलेश मटियानी यद्यपि शुद्ध रूप से जैनेन्द्र कुमार, इलाचन्द्र जोशी और सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' की तरह हिन्दी साहित्य जगत में मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार के रूप में नहीं जाने जाते हैं। फिर भी मटियानी ने मनोविज्ञान के विविध पहलुओं को अपने उपन्यास साहित्य में उद्‌धाटित किया है। मन अनुभूतियों का भंडार होता है और मनोविज्ञान ही है जो मानव के सूक्ष्म से सूक्ष्म भावों की, अनुभूतियों की जांच-पड़ताल करके उसे वास्तविक रूप में सभी के समक्ष प्रस्तुत करता है। साहित्यकार मटियानी ने भी मानव मन की विभिन्न परतों को खोलने के लिए अपने उपन्यासों में मनोविज्ञान का सहारा लिया है। मनोविज्ञान के विविध पहलुओं को इन्होंने अपने औपन्यासिक पात्रों एवं उनके चरित्र-चित्रण के माध्यम से उजागर किया है। यद्यपि उन्होंने आग्रहपूर्ण तरीके से मनोविज्ञान के विभिन्न सिद्धान्तों का प्रयोग अपने उपन्यासों में नहीं किया है लेकिन इनके उपन्यास-साहित्य में विविध प्रसंगों में, विविध अंशों में, पात्रों एवं उनके चरित्र-चित्रण में मनोविज्ञान का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। अतः उन्हीं अंशों तथा विविध प्रसंगों के आधार पर ही हम इनके उपन्यास-साहित्य में आए मनोविश्लेषण की विशेषताएँ देख सकते हैं।

फ्रायड के 'यौन सिद्धान्त' से मटियानी कहीं ना कहीं सहमत है। यद्यपि ये इसे फ्रायड की तरह मूल प्रेरक शक्ति नहीं मानते है। मटियानी का मानना है कि जीवन में यौन तृप्ति सहज है, वो पूर्ण न होने पर विकारों को जन्म देती है। ''सामाजिक प्राणी होने के नाते व्यक्ति को समाज के विभिन्न बंधनों एवं परम्पराओं को स्वीकार करना पड़ता है। इन्हीं कारणों से उसे अपनी इच्छाएँ परिवर्तित करनी पड़ती है। नियमों तथा बंधनों के कारण काम वासना तथा अन्य प्रेरणाओं के प्रदर्शन पर अवरोध लगा रहता है। इन सब इच्छाओं के अतृप्त रहने के कारण व्यक्ति में कुंठा आ जाती है तथा उसकी यौन जिजीविषा भी अतृप्त रहती है। इसको पूरा करने के लिए व्यक्ति विविध प्रकार के सामाजिक तथा गैर सामाजिक साधनों का सहारा लेता है। व्यक्ति का स्वाभाविक स्वभाव है, इन्हें पूर्ण करना।''[1]

मटियानी ने अपने उपन्यासों के विविध पात्रों के माध्यम से अतृप्त यौन जिजीविषा अथवा दमित यौन कामना को चित्रित किया है। 'दो बूँद जल' उपन्यास लेखक का फ्रायड मनोविज्ञान के आधार पर दमित वासनाओं और अतृप्त यौन जिजीविषा की परितुष्टि की परिचर्चा मात्र है। उपन्यास के पात्र शिववल्लभ पंडित और दौलत ठाकुर अपनी दमित यौन

इच्छाओं की पूर्ति के लिए भोली-भाली रेशमा को अपने प्रेमजाल में फंसा लेते हैं। ''जब दो बरस तक पंडित शिव वल्लभ ने मास्टरनी बनाने के सपने दिखाने के बाद किनारा काट लिया था और रेशमा ने अपनी पहली संतान को अपनी कोख से निकलते ही धरती की कोख में दबा दिया था, और कभी तब, जब दौलत ठाकुर ने होटल में रख लिया था कि होटल की मालकिन बनकर बरामदे में बैठी रहेगी।''[२] इस प्रकार उपन्यास के पात्र पंडित और ठाकुर अपनी अतृप्त यौन जिजीविषा की पूर्ति के लिए रेशमा को माध्यम बनाते हैं।

'कोई अजनबी नहीं' उपन्यास की केन्द्रीय पात्र रामप्यारी स्वयं अतृप्त यौन कामना से पीड़ित है और वह अपनी यौन कामनाओं की तृप्ति हरभजन चौधरी से करती है। रामप्यारी महसूस करती है - ''कभी-कभी ऐसा भी होता है कि जिन्दगी में व्यक्ति जिन तृष्णाओं को पापजन्य या कुत्सामूलक जानता है और उनके सनसनाते हुए प्रवाह को आत्मनिषेध के द्वारा पीछे को हटाता और ठहराता रहता है वो स्याह पड़ती चली जाती हैं। ...रामप्यारी महसूस कर रही है कि अपनी स्याह पड़ी हुई तृष्णाओं को भोग लेने के बाद मन बहुत साफ हो जाता है।''[३] इस प्रकार रामप्यारी अपनी अतृप्त यौन-कामनाओं को पूरा करने के बाद तृप्ति का अनुभव करती है और अपने मन को भी साफ पाती है।

'कबूतरखाना' उपन्यास में मटियानी ने फ्रायड-मनोविश्लेषण के आलोक में सेठ-सेठानियों की दमित वासनाओं का चित्रांकन किया है। केवल मात्र सेठ लोग ही नहीं बल्कि इन सेठों की सेठानियाँ भी अपनी काम तृप्ति अपने घरों में काम करने वाले नौकरों से करती हैं। ऐसी ही एक सेठानी के घर काम करने वाला गणपत रामा अपनी आपबीती बताता है। ''हमेरी समझ में नहीं आया, काहे कूँ सेठानी इतना नरम बिस्तर और सेठ को छोड़कर इधर हमेरी बगल में चिटकता है? हम सोचता होता, कि सेठ लोगों के घर में भी कैसा-कईसा पोल-पट्टी चलता है, कि उसने हमेरे गाल पर अपना तीन का तीन दाँत चिटका दिया।''[४]

इसी प्रकार लेखक ने अपने अन्य उपन्यासों जैसे 'जलतरंग' उपन्यास की 'मिसेज खोसला', 'एक मूँठ सरसों' उपन्यास की 'रेवती', 'मंजिल दर मंजिल' उपन्यास का 'जेफर्सन साहब', 'गोपुली गफूरन' की 'गोपुली', 'कबूतरखाना' उपन्यास में बम्बई में रहने वाले सेठ-सेठानियाँ और 'बोरीवली से बोरीबन्दर तक' उपन्यास के विभिन्न पात्रों आदि के द्वारा यौन-सिद्धान्त को ही अभिव्यक्ति दी है। लेखक के अनुसार काम संबंधी इच्छाओं को नकारा नहीं जा सकता। जीवन में यौन तृप्ति सहज है जो पूर्ण न होने पर विकारों को जन्म देती है और मस्तिष्क के संतुलन पर हावी हो जाती है। परन्तु लेखक फ्रायड की तरह इसे जीवन की मूल प्रेरक शक्ति नहीं मानते हैं। वे इस काम भावना को जीवन के लिए महत्वपूर्ण तो मानते हैं पर इतना महत्व भी नहीं देते कि वह जीवन की अन्य सारी गतिविधियों को भी संचालित/प्रभावित करे।

मटियानी अपने औपन्यासिक चरित्र-चित्रण में फ्रायड कथित अहं तथा दमित काम वासना के समान ही एडलर के प्रमुख 'हीनता ग्रंथि सिद्धान्त' से भी पूर्णतया सहमत थे। उंनके उपन्यासों के कई पात्र इस मनोग्रंथि से पीड़ित है, जिसके माध्यम से लेखक यह बताना चाहते हैं कि कभी-कभी शारीरिक-मानसिक अथवा अन्य किसी अक्षमता के कारण व्यक्ति की आकांक्षाएँ-इच्छाएँ पूर्ण नहीं हो पाती हैं तो व्यक्ति में हीन ग्रंथि जन्म ले लेती है, इस हीन ग्रंथि से पीड़ित व्यक्ति स्वार्थी, ईर्ष्यालू और अविश्वासी तक हो जाता है जैसे 'हौलदार' उपन्यास का प्रधान पात्र 'डूँगरसिंह'। लेखक ने इस उपन्यास में हीनता ग्रंथि से पीड़ित डून हौलदार के नाम से प्रसिद्ध हुए डूँगरसिंह का मनोवैज्ञानिक चित्रण करने का सफल प्रयास किया है।

हीनता ग्रंथि से पीड़ित डूँगरसिंह इतना स्वार्थी और ईर्ष्यालू हो जाता है कि जिस नरुली से वह प्रेम करता है, उसका अहित करने से भी नहीं हिचकिचाता। डूँगरसिंह नरुली और उसके पति हौलदार चतुरसिंह के प्रति अहित की भावना रखता है और गोल्ल देवता के मन्दिर में यही प्रार्थना करता है कि नरुली और चतुरसिंह के कभी संतान ना हो। ''मन्दिर द्वारे पहुँचकर डूँगरसिंह ने दो पैसे भेंट चढाए। फूल-पाती उठाकर, टोपी के किनारे, सिर पर रखी जो गांधी महाराज की लाम की निशानी के रूप में रह गई थी। बैसाखी पर भार दिये-दोनों हाथ जोड़े-दाहिने होना हो, गोल्ल राजा! जिसने नरुली का प्यार छीनने के लिए, लकड़ी का आधार दिया-ऐसी लाम के लेफ्टीनंटो और हौलदारों में से बीज को न रखना! हे परमेश्वर, मेरी वाणी सुफल कर देना।''[५] पर्वतीय परिवेश में लिखित 'हौलदार' उपन्यास वास्तव में हीन भावना जनित मनःस्थितियों का विभिन्न कोणों से खींचा गया मनोवैज्ञानिक चित्र है।

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक युंग ने अपने 'विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान' के अन्तर्गत व्यक्तित्व संबंधी जो सम्प्रत्यय दिया है, जिसमें उन्होंने मानव व्यक्तित्व को बहिर्मुखी और अन्तर्मुखी विभागों में विभक्त किया है। उससे भी लेखक मटियानी पूर्णतया प्रभावित है और अपने उपन्यासों में

बहिर्मुखी-अन्तर्मुखी व्यक्तित्व वाले विभिन्न पात्रों का चित्रण किया है। इनके उपन्यासों मे अनेक ऐसे पात्र हैं जो घुटन-कुंठा-रुग्णता के कारण बहिर्मुखता से अन्तर्मुखता की ओर उन्मुख हुए हैं। जैसे 'दो बूँद जल' की 'रेशमा', 'मंजिल दर मंजिल' की 'फातिमा बेगम'।

'दो बूँद जल' उपन्यास की नायिका रेशमा अपने वेश्या जीवन के नरक को भोगने के पश्चात अपने जीवन में पहाड़ समान दुःखों का सामना करते-करते अन्तर्मुखी होती चली गई। वह अक्सर अपने अन्तर्मन में सोचती रहती थी। वह सोचते-सोचते अपने आप से ही कहने लगती है। "... रेशमा, शिववल्लभ पंडित तेरे प्रेमी बनने की बात किया करते थे, मगर बन नहीं सके। लेकिन तूने तो उनकी प्रेमिका बनने में कोई कसर नहीं रख छोड़ी थी ? दौलत ठाकुर तेरा पति बनना चाहता था, मगर बन नहीं सका, लेकिन तूने तो उसकी पत्नी बनने में कोई कसर नहीं रखी थी ? हो सकता है अन्त में तेरा बेटा सुरेन्द्र भी तेरे बेटे के रूप में तुझे न अपना सके, मगर तू तो अपने को जीवन के अन्तिम क्षण तक उसकी माँ ही बनाए रखेगी। तेरा तो कोई पुरुष नहीं हो सकता रेशमा, मगर तू तो कई पुरुषों की होकर रहती चली आई है।"[६]

'कोई अजनबी नहीं' उपन्यास की नायिका रामप्यारी का अचेतन मन चाहता है कि हरभजन उस पर पूर्ण अधिकार रखे। उसका अचेतन मन पति के रूप में हरभजन को दृढ़ तथा प्रचण्ड पौरुष से युक्त देखना चाहता है। "रामप्यारी जानती है कि उसके अन्दर की औरत जात अब उस पुरुष को भी देख लेना चाहती है जो उसे उसका पौंठा मरोड़ कर, अपने समीप बैठा सके।"[७] क्योंकि रामप्यारी के मन के अन्दर ही अन्दर पुरुषों को लेकर अनुभूतियां खंडित हो चुकी थी। उसके अन्दर किसी ऐसे पुरुष के साथ जुड़कर जीने की तृष्णा है जो पुरुषत्व हीन न होकर निर्भय, अपार पौरुष का स्वामी हो। यहाँ रामप्यारी के अचेतन मन के द्वारा उसकी अन्तर्मुखता का ही परिचय मिलता है।

'मंजिल दर मंजिल' उपन्यास में लेखक मटियानी नायिका फातिमा बेगम की विविध मनोदशाओं को मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करते हुए उसकी अन्तर्मुखता का भी परिचय देते हैं।

मटियानी युंग के 'सामूहिक अचेतना' सिद्धान्त को भी महत्वपूर्ण मानते हैं। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक युंग का मानना है कि मानव के अचेतन मन के दो भाग हैं-

(प) व्यक्तिगत अचेतन और (पप) सामूहिक अचेतन

अर्थात व्यक्ति में व्यक्तिगत अचेतन और सामूहिक अचेतन ये दो अवस्थाएँ पाई जाती हैं। इनमें से सामूहिक अचेतन में व्यक्ति को पूर्वजों से प्राप्त, अपने समाज से प्राप्त, प्राचीन काल से चले आ रहे संस्कार, रीति-रिवाज, परम्पराएँ, रूढ़ियाँ आदि रहते हैं, जिनका संबंध उनकी प्रजाति, संस्कृति से होता है।

लेखक ने भी अपने आलोच्य उपन्यासों में जिस पहाड़ी और महानगरीय संस्कृति को अभिव्यक्ति दी है, वह संस्कृति कहीं न कहीं उस स्थान विशेष के लोगों के सामूहिक अचेतन मन की ही झलक है। उन्होंने उपन्यास 'हौलदार', 'गोपुली-गफूरन' के अन्तर्गत गाँव के जिन रीति-रिवाजों, परम्पराओं का उल्लेख किया है, जिन्हें गाँव के लोग बरसों से पीढ़ी दर पीढ़ी निभाते आ रहे हैं वे रीति-रिवाज, परम्पराएँ, संस्कार, रूढ़ियाँ उस स्थान-विशेष के लोगों के सामूहिक अचेतन मन का हिस्सा है और लेखक ने उन परम्पराओं के माध्यम से स्थान-विशेष के लोगों के सामूहिक अचेतन मन को ही अभिव्यक्ति दी है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि लेखक मटियानी पर फ्रायड, एडलर व युंग तीनों की विचारधारा का प्रभाव है। वस्तुतः लेखक का उद्देश्य मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के आलोक में अपने उपन्यासों की रचना करना नहीं था। इनका उद्देश्य तो नैतिक दृष्टि से गंधाते निम्न मध्यम वर्गीय जीवन के यथार्थ का चित्रण करना था। इनके जीवन के विविध तथ्यों को सामने लाने के लिए, इस वर्ग के लोगों की सोच, उनकी समझ, विभिन्न संवेदनाएँ, अनुभूतियाँ, मानसिक द्वन्द्व, घुटन, संत्रास, निराशा, अनैतिकता, अलगाव, दमित इच्छाएँ आदि को प्रत्यक्ष करने के लिए लेखक ने मनोविज्ञान के विविध रूपों का सहारा लिया है जिसमें ये पूरी तरह सफल कहे जा सकते हैं।

सन्दर्भ

१. राजेश कुमार, शैलेश मटियानी के उपन्यासों में युगबोध, पृ. २२
२. शैलेश मटियानी, दो बूँद जल, पृ. १५८
३. शैलेश मटियानी, कोई अजनबी नहीं, पृ. ५४, ५५
४. शैलेश मटियानी, कबूतरखाना, पृ. ३२
५. शैलेश मटियानी, हौलदार, पृ. १०
६. शैलेश मटियानी, दो बूंद जल,पृ. १३३
७. शैलेश मटियानी, कोई अजनबी नहीं, पृ. ५५